पृथ्वी का देवता वृषभ था।''

सुमेरू लोग कृषि के देवता के रूप में बैल की पूजा करते थे। हिती लोग भी भगवान ऋषभदेव से प्रभावित रहे हैं। डा.राधाकृष्ण[२], डा.स्टीवेन्शन[३],श्री जयचन्द विद्यालंकार[४] इन्हें जैनधर्म का संस्थापक मानते हैं।

कई लोग भगवान ऋषभदेव की समानता आदिम बाबा और शिव से करते हैं। दशम ग्रंथ में गुरू गोबिंदसिंह ने २४ अवतारों में एक अर्हत् अवतार माना है।

भगवान ऋषभदेव के साथ हजारों लोगों ने दीक्षा ग्रहण की। कुछ लोग संयम के कष्ट न झेल सके, पर वह घर नहीं आए। वह भिन्न-भिन्न वेषों में धर्म-प्रचार करने लगे। ऐसे ही कपिल नाम का राजकुमार था जो प्रभु के पास साधु बना, पर बाद में जैन साधु जीवन त्याग कर सांख्यदर्शन का संस्थापक बना।

जब प्रभु ऋषभदेव को अयोध्या में केवलज्ञान प्राप्त हुआ, उसी दिन भरत राजा को पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ व चक्रवर्ती बनने का लक्षण चक्र रत्न आयुधशाला में प्रकट हुआ। भरत ने सारी पृथ्वी पर विजय प्राप्त की और प्रथम चक्रवर्ती बने। उनके छोटे भ्राता बाहुबलि, जो भरत से ज्यादा शक्तिशाली थे, उन्होंने अपनी स्वतंत्रता का सौदा न किया। उन्होंने अपनी प्रभुसत्ता की रक्षा के लिए भरत की अधीनता स्वीकार न की। युद्ध में सेनाएं सामने आई। दोनों ओर के मंत्री की सलाह से मल्ल-युद्ध, मुष्टि-युद्ध, दृष्टि-युद्ध हुए। सभी में बाहुबलि जीत गए। फिर भरत चक्रवर्ती ने चक्र चलाकर बाहुबलि को समाप्त करना चाहा, पर चक्र रत्न परिजनों पर नहीं चलता। इसी कारण वह बाहुबलि के पास आकर भरत के पास लौट आया। भरत के इस धोखे से बाहुबलि का मन वैराग्य की ओर मुड़ गया। बाहुबलि की वैराग्यात्पति का एक कारण यह भी माना जाता है कि मुष्टि युद्ध के समय बाहुबलि ने अपने ज्येष्ठ भ्राता भरत चक्रवर्ती को मुक्का मारने के लिए हाथ उपर उठाया तो उनके मनमें विचार जागृत हुआ कि मैं राज्य के लिए बड़े भाई से युद्ध करूं, ऊपर उठे हाथ से लोच की एवं साधु बन गए। बाहुबलि-भरत युद्ध गंधार देश में हुआ था। उनके १०० पुत्रों से १०० देशों की स्थापना हुई थी। भरत को पराजित कर बाहुबलि ने दीक्षा ग्रहण की। युद्ध-भूमि, तप-भूमि बन गई। मन में द्वन्द्व चलता रहा, जिसे स्वयं भगवान ऋषभदेव ने अपनी साध्वी बनी पुत्री ब्राह्मी व सुन्दरी को भेजकर दूर किया।

भगवान ऋषभदेव अपने दीक्षाकाल में हर देश में घूमे। उन्होंने एक वर्ष का लम्बा तप किया। उस समय कोई भी शुद्ध भिक्षा देने वाला नहीं था, पर पुनर्जन्म की स्मृति आने के कारण बाहुबलि के पौत्र श्रेयांस राजा ने प्रभु को प्रथम इक्षुरस का आहार प्रदान किया। इस आहार के कारण उनके वंश को इक्ष्वाकु नाम देवताओं ने दिया। श्रेयांस राजा का दान वाला दिन जैन इतिहास में अक्षय तृतीया कहलाया। आज भी हजारों जैन भगवान ऋषभदेव की स्मृति में श्रद्धा के अनुसार वर्षी तप करते हैं और वह दीर्घ तपस्या हस्तिनापुर व अन्य तीर्थों पर पारणा करते हैं।

हजारों साधु-साध्वियों के अलावा लाखों श्रावक-श्राविकाओं को प्रभु ने मोक्षमार्ग बताया। स्वयं भरत चक्रवर्ती के पुत्र मरीचि, जो भिक्षु जीवन से भटक गए थे, उनको प्रभु ने अन्तिम तीर्थंकर घोषित किया।

जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर प्रभु ऋषभदेव का निर्वाण अष्टापद पर्वत पर हुआ, जिसे आज कैलाश पर्वत कहते हैं।

●●

---

१. ''इह इक्ष्वाकु कुल वंशोद्भवेन नाभिसुतेन मरूदेव्या नन्दने।
महादेवेन ऋषभेण- दस प्रकार धर्म स्वयमेव चीर्णः।''

२. भारतीय दर्शन का इतिहास, भाग १ पृष्ठ २८७

३. कल्पसूत्र की भूमिका

४. भारतीय इतिहास की रूपरेखा।

अन्य तीर्थंकरों के विषयों में आवश्यक जानकारी
(तीर्थंकर चरित्र)

जैनधर्म में कुछ तीर्थंकरों का तो बहुत विस्तार से वर्णन है पर कुछ तीर्थंकर ऐसे भी हैं, जिनके जीवन की घटनाओं का क्रम नहीं मिलता है। एक बात उल्लेखनीय है कि भगवान ऋषभदेव के समय पंच महाव्रत, प्रतिक्रमण, चातुर्मास करना आवश्यक ठहराया, पर बीच में तीर्थंकरों के समय में चातुर्याम धर्म में ब्रह्मचर्य को अपरिग्रह व्रत में रखा। शेष तीर्थंकरों ने ब्रह्मचर्य को परिग्रह व्रत से पृथक रखकर पांच महाव्रत बताए।

भगवान अजितनाथ

दूसरे तीर्थंकर भगवान अजितनाथ का वर्णन थेरगाथा १/२०[१] में प्रत्येक बुद्ध के रूप में आया है। महाभारत में अजित और शिव को एक चित्रित किया गया है। लगता है ये तीर्थंकर दोनों मान्यताओं में पूजनीय रहे होंगे।

सोरसन्स ने महाभारत के विशेष नामों का कोष बनाया है। इसमें सुपार्श्व चन्द्र और सुमति नाम के जैन तीर्थंकरों को असुर बताया गया है।[२]

वैदिक मान्यता के अनुसार जैनधर्म असुरों का धर्म रहा है। असुर आर्हतों के उपासक थे किन्तु जैन ग्रन्थों में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता।

विष्णुपुराण,[३] पद्मपुराण,[४] मत्स्यपुराण,[५] देवी भागवत[६] में असुरों को आर्हतों या जैन धर्म का अनुयायी बताया गया। अवतारों के निरूपण में भगवान ऋषभ को विष्णु का, सुपार्श्व को कुपथ असुर का अंशावतार माना गया है।

महाभारत में विष्णु और शिव के सहस्र नाम आए हैं उस सूची में श्रेयांस, अनन्त, धर्म, शान्ति और संभव के नाम विष्णु के रूप में आए हैं, जो वस्तुतः जैन तीर्थंकरों के नाम हैं। इनकी महानता के कारण महाभारत के लेखक ने उन्हें तीर्थंकरों के विशेषणों के रूप में जोड़ा है।

नाम साम्य के अतिरिक्त इन महापुरुषों का सम्बन्ध असुरों से जोड़ा गया है। असुर वेद विरोधी आर्हत् धर्मोपासक थे।

भगवान शान्तिनाथ

भगवान शान्तिनाथ सोलहवें तीर्थंकर थे। पूर्वभव में वे राजा मेघरथ थे। उन्होंने एक कबूतर के बदले अपनी जंघा का मांस देकर उसके प्राणों की रक्षा की थी। इस घटना का वर्णन महाभारत में राजा शिवि के रूप में किया था। अगले जन्म में इस अनुकम्पा के कारण उन्होंने चक्रवर्ती व तीर्थंकर गोत्र बांधा। कुरु वंश में हस्तिनापुर में माता अचिरा और राजा विश्वसेन के यहां उनका जन्म हुआ था। जन्म होते ही राज्य में फैला रोग समाप्त हो गया था। बौद्ध ग्रंथ में भी शांतिनाथ की दया का समर्थन 'जीमूतवाहन' के रूप में मिलता है। इसी तरह हस्तिनापुर में श्री कुंथुनाथ पैदा हुए। वे भी चक्रवर्ती व तीर्थंकर थे। इनका निर्वाण सम्मेद शिखर पर्वत पर हुआ।

18वें तीर्थंकर अरनाथ का वर्णन अंगुत्तरनिकाय में 'अरक' नाम से आया है। इनके बारे में कहा गया है-बुद्ध से पहले जो सात तीर्थंकर पैदा हुए थे यह उनमें अंतिम थे।

भगवान मल्लीनाथ

इसके बाद भगवती मल्लीनाथ का वर्णन आता है। स्वयं श्रमण महावीर द्वारा ज्ञाताधर्मकथांगसूत्र में मल्ली भगवती की कथा वर्णित की गई है।

भगवान मल्लीनाथ को श्वेताम्बर परम्परा स्त्री तीर्थंकर के रूप में स्वीकार करती है इसके विपरीत दिगम्बर परम्परा उन्हें पुरुष रूप में स्वीकार करती है। दिगम्बर परम्परा की मान्यता है कि स्त्री क्योंकि नग्न नहीं रह सकती, इसलिए पूर्ण संयम ग्रहण नहीं कर सकती तो स्त्री के तीर्थंकर होने का प्रश्न नहीं उठता। स्त्री के तीर्थंकर के बारे में दोनों मान्यताएं एक जैसी हैं पर श्वेताम्बर स्त्री का तीर्थंकर होना अछेरा (अचम्भा) मानते हैं। श्वेताम्बर परम्परा में इस प्रकार के कई आश्चर्य मिलते हैं।

ज्ञाताधर्मकथांग में भगवती मल्ली का वर्णन ऐतिहासिक ढंग से मिलता है-

''पूर्वजन्म में संयम व तप की आराधना के कारण ७ जीवों ने मनुष्य गोत्र बांधा।''

१. प्रतिबुद्ध इक्ष्वाकुवंश का राजा हुआ जिसकी राजधानी अयोध्या थी।
२. चन्द्रच्छाय अंग देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी चम्पा थी।
३. शंख काशी देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी वाराणसी थी।
४. रुक्मि कुणाल देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी श्रावस्ती थी।
५. अदीनशत्रु कुरु देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी हस्तिनापुर थी।
६. जिनशत्रु पंचाल देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी कांपिल्यपुर थी।
७. सातवां जीव जो महाबल मुनि का था, मिथिला के राजा कुम्भ व रानी प्रभावती के स्त्री तीर्थंकर के रूप में पैदा हुआ। माता ने चौदह स्वप्न देखे। पाठकों से स्वप्नफल राजा व रानी ने पूछा। मल्ली का भविष्य जानकर दोनों प्रसन्न हुए। यौवनावस्था में मल्लीदेवी की चर्चा अनुपम सुन्दरी के रूप में होने लगी।

यह चर्चा देश-देशान्तरों में फैल गई। पूर्वजन्म के मित्र कर्मोदय से छहों राजा भगवती मल्ली की मांग करने लगे। वह अपनी सेना के साथ नगर में आ घुसे। भगवती मल्ली ने बुद्धिमता के साथ उन राजाओं को रोकने में सहायता की। फिर उन्हें प्रतिबोध देकर सभी को संयम-पथ पर लगाया। फिर स्वयं अनेकों प्रजाजनों के साथ साधना मार्ग अंगीकार किया। केवलज्ञान प्राप्त कर आप तीर्थंकर रूप में धर्म-प्रचार करने लगे।

लम्बा समय धर्म-प्रचार करने के पश्चात् भगवती मल्ली का निर्वाण सम्मेद शिखर पर्वत पर हुआ।

भगवान मुनिसुव्रत स्वामी

बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत का समय श्री रामचन्द्र जी के समकालीन है। जैन रामायण के अनुसार बहुत से जीवों ने प्रभु से संयम ग्रहण किया। बाल्मीकि रामायण में तापस व श्रावकों का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ है। यह बात और है कि जैन रामायण व हिन्दू रामायण में घटना-क्रम की दृष्टि से काफी अंतर है। पर यह अंतर तो सभी हिन्दू रामायणों में भी प्राप्त होता है। इसी कारण गोस्वामी तुलसीदास ने हिन्दू व जैन रामायणों को आधार रखकर रामचरितमानस की रचना की। बौद्ध के 'दशरथ जातक' व जैन की 'पउम सिरि चरिउ' में राम का वर्णन है। प्रभु मल्लीनाथ, मुनिसुव्रत इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ

का वैदिक ग्रंथों में कोई वर्णन नहीं है।

भगवान अरिष्ठ नेमिनाथ

बाईसवें तीर्थंकर का जन्म समुद्रविजय राजा व रानी शिवादेवी के यहां सोरियपुर में हुआ। यह समय यादवों की उन्नति का समय था। उनकी मंगनी राजुल राजकुमारी से हुई। बारात दुल्हन के दरवाजे पर पहुंची। अचानक आपने देखा कि हजारों पशु बाड़े में बंधे पड़े हैं। पता लगाया तो पता चला कि ये सभी बरातियों की सेवा के लिए कई दिन से बांधे गए हैं।

आपने बारात वापस कर दी। घर में आकर एक वर्ष वर्षीदान दिया, फिर गिरनार पर जाकर संयम ग्रहण किया। आपकी मंगेतर राजुल ने आपका अनुकरण किया। उसने भी अपनी सैकड़ों सखियों के साथ संयम ग्रहण किया। भगवान नेमिनाथ की कथा जैन आगम अंतकृद्दशा, निरयावलिका, दशवैकालिक, उतराध्ययनसूत्र में बड़े मार्मिक ढंग से उपलब्ध है। सैकड़ों लेखकों ने देश की विभिन्न भाषाओं- संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, पंजाबी में लिखा है। पर्यूषण के दिनों में अंतकृद्दशासूत्र पढ़ा जाता है। इस कारण यह कथा हर व्यक्ति की जुबान पर है। हजारों कवियों ने नेमि-राजुल की विरह गाथा को प्रेम-गाथा के रूप में चित्रित किया है।

भगवान नेमिनाथ का दूसरा नाम अरिष्टनेमि भी है। अरिष्टनेमि का वर्णन वेदों, पुराणों में भी आया है। इसलिए सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन् ने कहा था- ''वेदों में ऋषभ, अजित, अरिष्टनेमि जैन तीर्थंकरों का वर्णन उपलब्ध होता है।'' भगवान अरिष्टनेमि के संबंध में अधिक सामग्री देखने के लिए आचार्य देवेन्द्र मुनि जी का शोध ग्रंथ ''भगवान अरिष्टनेमि व कर्मयोगी श्रीकृष्ण : एक विवेचन'' देखना चाहिए। जिसमें आचार्यश्री ने बहुत प्रयत्न से भगवान अरिष्टनेमि के बारे में प्राचीन ग्रंथों से संदर्भ जुटाए हैं।

भगवान पार्श्वनाथ

तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के बारे में डा. हर्मन जैकोबी के विचार हम पीछे लिख आए है। पूर्व व पश्चिम के इतिहासकार आपको भारत का प्रथम ऐतिहासिक महापुरूष मानते हैं।

भगवान पार्श्वनाथ काशी-नरेश अश्वसेन व माता वामादेवी के सुपुत्र थे। आपका युग तप में हठयोग का युग था। उसी समय उपनिषद् ग्रंथ लिखे गए। इन सब ग्रंथों पर आपके उपदेशों का खुला असर है। क्योंकि सभी उपनिषद् ध्यान, आत्मा, मोक्ष की बात करते हैं। वेद, यज्ञ, हवन, पशुबलि विरोधी हैं। श्रमण परम्परा के प्रशंसक हैं।

भगवान पार्श्वनाथ ने योगियों द्वारा तप के प्रदर्शन की क्रिया का विरोध किया। उस समय में योगी जिंदा पानी या अग्नि में समाधि ले लेते थे, उल्टा लटकते थे, पंचाग्नि तप करते थे। उनकी सभी क्रियाओं में अज्ञानता झलकती थी।

इसी तरह की एक घटना काशी में भी घटी। जब भगवान पार्श्वनाथ ने कमठ संन्यासी को लकड़ी चीरकर सर्प का जलता जोड़ा निकालकर दिखाया। जलते सर्प जोड़े को आपने नवकार मंत्र सुनाया। इसी कारण उनकी सद्गति हुई। दोनों मरकर धरणेन्द्र व पद्मावती के नाम के देवरूप में पैदा हुए। श्वेताम्बर परम्परा आपको विवाहित मानती है। आपकी शादी राजकुमारी प्रभावती से होनी मानी जाती है। इनके पिता की युद्ध में आपने सहायता की थी।

भगवान पार्श्वनाथ का जन्म ७२७ ई.पू. में हुआ था। १०० वर्ष की आयु में आपने सम्मेद शिखर पर

निर्वाण प्राप्त किया। आज भी इस पहाड़ का नाम पारसनाथ हिल्स व स्टेशन का नाम पारसनाथ है।

आपका वर्णन बौद्ध ग्रंथों में अनेकों स्थलों पर उपलब्ध होता है। भगवान बुद्ध ने कुछ समय श्रमणों के निर्ग्रन्थ धर्म की साधना की थी जिसके बारे में वे शिष्य सारिपुत्र से कहते हैं - " सारिपुत्र! बोधिप्राप्त से पूर्व मैं दाढ़ी-मूछों का लुंचन करता था। मैं खड़ा रहकर तपस्या करता था। उकडु (आसन) में बैठकर तपस्या करता था। हथेली पर भिक्षा लेकर खाता था। बैठे हुए, स्थान पर आकर दिए हुए अन्न को अपने लिए तैयार किए अन्न से और निमन्त्रण को स्वीकार नहीं करता था?[७] यह सारा आचार जैन परम्परा अनुसार जिनकल्पी मुनि का है। पं. सुखलाल जी संघवी, [८] धर्मानंद कौशाम्बी,[९] डा. राधाकुमुद मुकर्जी[१०] और श्री राइस डेविड्स[११] ने भगवान बुद्ध को भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा से प्रभावित बताया है। बौद्ध ग्रन्थों में भगवान पार्श्वनाथ को चातुर्याम धर्म का प्रमुख बताया है।

इसके बाद अंतिम तीर्थंकर ज्ञातपुत्र श्रमण भगवान महावीर हुए जिनके बारे में हम पाठकों को विस्तृत जानकारी देंगे।

उपसंहार

यहां हमारा उद्देश्य श्रमण संस्कृति में तीर्थंकर परम्परा का संक्षिप्त परिचय देना है। जैनधर्म की प्राचीनता के बारे में भारतीयों में उपलब्ध जानकारी, देशी व विदेशी विद्वानों के जैनधर्म के प्रति विचारों से जनमानस को अवगत कराना है। हमारा एक उद्देश्य भारतीय संस्कृति की दो धाराओं-श्रमण व वैदिक को स्पष्ट करके बताना है। चौबीस तीर्थंकरों के बारे में संक्षिप्त जानकारी हम एक चार्ट में दे रहे हैं। श्वेताम्बर आचार्य कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र सूरीश्वर ने २४ तीर्थंकरों के बारे में त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र में जैन आगमों, चूर्णि, निर्युक्ति, टीकाओं के आधार पर विस्तारपूर्वक लिखा है।

---

१. थेरगाथा १/२०
२. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग १, प्रस्तावना पृष्ठ २४।
३. विष्णुपुराण ३/१७/१८
४. पद्मपुराण सृष्टि खण्ड, अध्याय ५, श्लोक १७०-४१३
५. मत्स्यपुराण २४/४३/४९
६. देवी भागवत ४/१३/५४-५७
७. (क) मज्झिम निकाय महासिंहनाद पुत्र १/१/२
   (ख) भगवान बुद्धः धर्मानन्द कौशाम्बी, पृष्ठ ६८-६९
८. चार तीर्थंकर, पृष्ठ १४०-१४१
९. पार्श्वनाथ का चातुर्याम धर्म, पृष्ठ २८-३१
१०. हिन्दू सभ्यता, पृष्ठ २३
११. Mr. Rhyce Devids : Gautam the Man, pp, 22-25